

## Chapter बयालीस

### यज्ञ के धनुष का टूटना

इस अध्याय में त्रिवक्रा द्वारा वर प्राप्त करने, यज्ञ-धनुष के टूटने, कंस के सैनिकों के विनाश, कंस द्वारा देखे गये अपशकुनों एवं अखाड़े के उत्सवों का वर्णन हुआ है।

सुदामा का घर छोड़ने के बाद भगवान् कृष्ण को कंस की एक तरुणी कुबड़ी दासी त्रिवक्रा मिली जो उत्तम लेपों का थाल लिये हुए थी। भगवान् ने उससे पूछा कि तुम कौन हो और तब उससे कुछ लेप माँगा। भगवान् के सौन्दर्य तथा विनोदी वचनों से ललचाकर त्रिवक्रा ने कृष्ण तथा बलराम दोनों को प्रचुर लेप प्रदान किया। बदले में, कृष्ण ने उसके पैर के अँगूठों पर अपने चरणकमल रखे, उसकी टुड्डी पकड़ी और ऊपर उठाया तो उसका कूबड़ ठीक हो गया। अब इस सुन्दर तथा मनोहर त्रिवक्रा ने कृष्ण के ऊपरी वस्त्र का छोर पकड़ लिया और उनसे अपने घर चलने के लिए कहा। कृष्ण ने उत्तर दिया कि कुछ कार्य करने के बाद वे अवश्य ही उसके घर आकर उसकी मानसिक पीड़ा दूर करेंगे। तत्पश्चात् दोनों भगवानों ने मथुरा का दृश्य देखना जारी रखा।

जब कृष्ण तथा बलराम राजमार्ग से होकर जा रहे थे तो व्यापारियों ने विविध उपहारों के साथ उनकी पूजा की। कृष्ण ने पूछा कि धनुष-यज्ञ कहाँ हो रहा है और जब वे रंगभूमि पर पहुँचे तो एक

विचित्र धनुष देखा जो इन्द्र के धनुष जैसा था। रक्षकों के मना करने पर भी कृष्ण ने बलपूर्वक उस धनुष को उठा लिया, उसकी डोरी चढ़ाई और क्षण-भर में उसके दो खण्ड कर दिये। इससे इतना भयानक कान फाड़ने वाला शब्द हुआ कि स्वर्गलोक तक गूँज उठे और कंस के हृदय में भय का संचार हो उठा। तब बहुत से रक्षकों ने “इसे पकड़ो, इसे मारो” शोर मचाते हुए कृष्ण पर आक्रमण किया। किन्तु कृष्ण तथा बलराम ने धनुष के केवल दोनों खण्ड उठाकर इन रक्षकों की खूब पिटाई की जिससे वे मर गये। इसके बाद दोनों भगवानों ने कंस द्वारा भेजे गये सैनिकों की एक टोली का संहार किया और इसके बाद वे अखाड़े से चले गए और उन्होंने अपना पर्यटन जारी रखा।

जब नगरवासियों ने कृष्ण तथा बलराम के पराक्रम तथा सौन्दर्य को देखा तो उन्होंने सोचा कि हो न हो ये दोनों प्रमुख देवता हैं। निस्सन्देह मथुरावासियों द्वारा दोनों पर दृष्टिपात करने से उन्हें गोपियों द्वारा भविष्यवाणी किये गये सारे आशीष प्राप्त हो गये।

सूर्यास्त होने पर कृष्ण तथा बलराम शाम का भोजन करने अपने ग्वाल-डेरें पर लौट आये। उन्होंने सुखपूर्वक विश्राम करते हुए रात बिताई। किन्तु राजा कंस इतना भाग्यशाली न था। जब उसने यह सुना कि कृष्ण तथा बलराम ने कितनी आसानी से विशाल धनुष को तोड़ डाला है और उसके सैनिकों का संहार कर दिया है, तो उसकी रात अतीव चिन्ता में बीती। उसने जगते-सोते अनेक अपशकुन देखे जिनसे उसकी आसन्न मृत्यु का आभास हो रहा था। उसके ही भय ने उसकी नींद हराम कर दी थी।

प्रातः होते ही मल्ल-उत्सव (दंगल) प्रारम्भ हुआ। शहर से तथा पड़ोसी जिलों से लोग रंगशाला में आकर अत्यन्त अलंकृत दीर्घाओं में अपना स्थान ग्रहण करने लगे। काँपते हृदय से कंस अपने राजसी मंच पर आसीन हुआ। उसने नन्द महाराज तथा अन्य ग्वालों को अपने अपने आसन ग्रहण करने के लिए आमंत्रित किया और वे अपनी अपनी भेंटें देने के बाद बैठ गये। तत्पश्चात् कुशती लड़ने वालों ने जब ताल ठोंकी तो संगीत का समौं बँध गया।

श्रीशुक उवाच

अथ व्रजराजपथेन माधवः

स्त्रियं गृहीताङ्गविलेपभाजनाम् ।

विलोक्य कुब्जां युवतीं वराननां

पप्रच्छ यान्तीं प्रहसन्नसप्रदः ॥ १ ॥

## शब्दार्थ

श्री-शुकः उवाच—शुकदेव गोस्वामी ने कहा; अथ—तब; व्रजन्—टहलते हुए; राज-पथेन—राजमार्ग से; माधवः—कृष्ण; स्त्रियम्—स्त्री को; गृहीत—पकड़े; अङ्ग—शरीर के; विलेप—लेप का; भाजनाम्—थाल; विलोक्य—देखकर; कुब्जाम्—कुबड़ी को; युवतीम्—युवती; वर-आननाम्—सुन्दर मुख वाली; पप्रच्छ—पूछा; यान्तीम्—जाते हुए; प्रहसन्—हँसते हुए; रस—प्रेम के आनन्द का; प्रदः—देने वाला ।

शुकदेव गोस्वामी ने कहा : जब भगवान् माधव राजमार्ग पर जा रहे थे तो उन्होंने एक युवा कुबड़ी स्त्री को देखा जिसका मुख आकर्षक था और वह सुगन्धित लेपों का थाल लिए हुए जा रही थी। प्रेमानन्द दाता ने हँसकर उससे इस प्रकार पूछा ।

तात्पर्य : श्रील विश्वनाथ चक्रवर्ती ठाकुर के अनुसार यह युवा कुबड़ी स्त्री वास्तव में भगवान् की पत्नी सत्यभामा की अंश-रूपा थी। सत्यभामा तो भगवान् की अन्तरंगा शक्ति हैं, जो भू-शक्ति कहलाती है और उनकी अंश-रूपा पृथिवी धरती की प्रतिनिधि है, जो असंख्य दुष्ट शासकों के भारी बोझ से झुक गई थी। भगवान् कृष्ण इन दुष्ट शासकों को नष्ट करने के लिए अवतरित हुए थे अतः इन श्लोकों में वर्णित कुबड़ी त्रिवक्रा को सीधा करने की भगवान् की लीला पृथ्वी के भार उतारने की सूचक है। साथ ही भगवान् ने त्रिवक्रा को अपना माधुर्य सम्बन्ध प्रदान किया ।

इस अर्थ के अतिरिक्त रसप्रदः शब्द सूचित करता है कि भगवान् ने इस तरुण कुबड़ी के साथ जो व्यवहार किया उससे उन्होंने अपने ग्वालमित्रों का मनोरंजन किया ।

का त्वं वरोर्वेतदु हानुलेपनं

कस्याङ्गने वा कथयस्व साधु नः ।

देह्यावयोरङ्गविलेपमुत्तमं

श्रेयस्ततस्ते न चिराद्भविष्यति ॥ २ ॥

## शब्दार्थ

का—कौन; त्वम्—तुम; वर-ऊरु—सुन्दर जंघाओं वाली; एतत्—यह; उ ह—आह, निस्सन्देह; अनुलेपनम्—लेप; कस्य—किसके लिए; अङ्गने—हे स्त्री; वा—अथवा; कथयस्व—कहो; साधु—सच सच; नः—हमको; देहि—दो; आवयोः—हम दोनों को; अङ्ग-विलेपम्—शरीर का लेप; उत्तमम्—सर्वश्रेष्ठ; श्रेयः—लाभ, कल्याण; ततः—तत्पश्चात्; ते—तुम्हारा; न चिरात्—शीघ्र ही; भविष्यति—होगा ।

[ भगवान् कृष्ण ने कहा ] : हे सुन्दर जंघाओं वाली, तुम कौन हो? ओह, लेप! हे सुन्दरी, यह किसके लिए है? हमें सच सच बता दो। हम दोनों को अपना कोई उत्तम लेप दो तो तुम्हें शीघ्र ही महान् वर प्राप्त होगा ।

तात्पर्य : भगवान् ने परिहास में उस स्त्री को वरोरु (सुन्दर जंघाओं वाली) कहकर सम्बोधित

किया। उनका यह मजाक परिहास दुर्भावनापूर्ण नहीं था क्योंकि वे सचमुच उसे सुन्दर बनाने वाले थे।

सैरन्युवाच

दास्यस्म्यहं सुन्दर कंससम्मता

त्रिवक्रनामा ह्यनुलेपकर्मणि ।

मद्भावितं भोजपतेरतिप्रियं

विना युवां कोऽन्यतमस्तदर्हति ॥ ३ ॥

शब्दार्थ

सैरन्शी उवाच—दासी ने कहा; दासी—दासी; अस्मि—हूँ; अहम्—मैं; सुन्दर—हे सुन्दर; कंस—कंस द्वारा; सम्मता—आदरित; त्रिवक्र-नामा—त्रिवक्रा (तीन स्थान से टेढ़ी) नामक; हि—निस्सन्देह; अनुलेप—लेप; कर्मणि—मेरे कार्य के लिए; मत्—मेरे द्वारा; भावितम्—तैयार किया हुआ; भोज-पतेः—भोजों के प्रमुख के लिए; अति-प्रियम्—अत्यन्त प्रिय; विना—के बिना; युवाम्—तुम दोनों; कः—कौन; अन्यतमः—कोई दूसरा; तत्—वह; अर्हति—पा सकता है, योग्य है।

दासी ने उत्तर दिया: हे सुन्दर, मैं राजा कंस की दासी हूँ। वे मेरे द्वारा तैयार किये गये लेपों का अतीव सम्मान करते हैं। मेरा नाम त्रिवक्रा है। जिन लेपों को भोजराज इतना अधिक चाहता है, भला उनका पात्र आप दोनों के अतिरिक्त कौन हो सकता है?

तात्पर्य : श्रील विश्वनाथ चक्रवर्ती बतलाते हैं कि त्रिवक्रा का अन्य नाम कुब्जा था। वह एकवचन सुन्दर सम्बोधन का प्रयोग करती है, जो यह संकेत करता है कि उसे केवल कृष्ण से कामेच्छा थी। किन्तु उसने अपने इस माधुर्य भाव को छिपाने के लिए द्विवचन रूप युवाम् “तुम दोनों के लिए” का प्रयोग किया। कुब्जा का नाम त्रिवक्रा शब्द सूचित करता है कि उसका शरीर गर्दन, वक्षस्थल तथा कमर तीन स्थानों से मुड़ा था।

रूपपेशलमाधुर्यं हसितालापवीक्षितैः ।

धर्षितात्मा ददौ सान्द्रमुभयोरनुलेपनम् ॥ ४ ॥

शब्दार्थ

रूप—उससे सौंदर्य; पेशल—आकर्षण; माधुर्य—मिठास; हसित—मन्द हँसी; आलाप—बातचीत; वीक्षितैः—तथा चितवनों से; धर्षित—अभिभूत; आत्मा—अपना मन; ददौ—दे दिया; सान्द्रम्—अत्यधिक; उभयोः—दोनों को; अनुलेपनम्—लेप।

कृष्ण के सौन्दर्य, आकर्षण, मिठास, हँसी, वाणी तथा चितवनों से अभिभूत मन वाली

त्रिवक्रा ने कृष्ण तथा बलराम को पर्याप्त मात्रा में लेप दे दिया।

तात्पर्य : यह घटना विष्णु पुराण में भी (५.२०.७) वर्णित है—

श्रुत्वा तमाह सा कृष्णं गृह्यतामिति सादरम् ।

अनुलेपनं प्रददौ गात्रयोगमथोभयोः ॥

“यह सुनकर उसने आदरपूर्वक कृष्ण को उत्तर दिया, “कृपया इसे लें” और उन दोनों को शरीर में लगाने के लिए उपयुक्त लेप प्रदान किया।”

ततस्तावद्भ्रारगेण स्ववर्णैतरशोभिना ।  
सम्प्राप्तपरभागेन शुशुभातेऽनुरञ्जितौ ॥ ५ ॥

#### शब्दार्थ

ततः—तब; तौ—वे दोनों; अङ्ग—अपने शरीरों के; रागेण—रंगीन प्रसाधनों से; स्व—अपने; वर्ण—रंगों से; इतर—इसके अतिरिक्त; शोभिना—अलंकृत करके; सम्प्राप्त—जिससे दिखने लगा; पर—सर्वोच्च; भगेन—श्रेष्ठता; शुशुभाते—सुन्दर लगने लगे; अनुरञ्जितौ—लेप करके।

इन सर्वोत्तम अंगरागों का लेप करके, जिनसे उनके शरीर अपने रंगों से विपरीत रंगों से सज गए, दोनों भगवान् अत्यधिक सुन्दर लगने लगे।

तात्पर्य : आचार्यों का सुझाव है कि कृष्ण ने अपने शरीर पर पीला लेप लगाया और बलराम ने नीला लेप।

प्रसन्नो भगवान्कुब्जां त्रिवक्रां रुचिराननाम् ।  
ऋञ्चीं कर्तुं मनश्चक्रे दर्शयन्दर्शने फलम् ॥ ६ ॥

#### शब्दार्थ

प्रसन्नः—तुष्ट; भगवान्—भगवान् ने; कुब्जाम्—कुबड़ी; त्रिवक्रा—त्रिवक्रा को; रुचिर—आकर्षक; आननाम्—मुख वाली; ऋञ्चीम्—सीधी; कर्तुम्—करने के लिए; मनः चक्रे—निश्चय किया; दर्शयन्—दिखलाते हुए; दर्शने—उन्हें देखने का; फलम्—फल।

भगवान् कृष्ण त्रिवक्रा से प्रसन्न हो गये अतः उन्होंने उस सुन्दर मुखड़े वाली कुबड़ी लड़की को अपने दर्शन का फल दिखलाने मात्र के लिए उसे सीधा करने का निश्चय किया।

पद्भ्यामाक्रम्य प्रपदे दूर्यङ्गुल्युत्तानपाणिना ।  
प्रगृह्य चिबुकेऽध्यात्ममुदनीनमदच्युतः ॥ ७ ॥

#### शब्दार्थ

पद्भ्याम्—अपने दोनों पैरों से; आक्रम्य—दबाकर; प्रपदे—उसके अँगूठों पर; द्वि—दो; अङ्गुलि—अँगुलियाँ; उत्तान—ऊपर उठाकर; पाणिना—अपने हाथों से; प्रगृह्य—पकड़कर; चिबुके—उसकी टुड्डी; अध्यात्मम्—उसके शरीर को; उदनीनम्—उठाया; अच्युतः—कृष्ण ने।

उसके पैरों के अँगूठों को अपने दोनों पाँवों से दबाते हुए भगवान् अच्युत ने उसकी टुड्डी के नीचे अपने दोनों हाथों की ऊपर उठी एक एक अँगुली रखी और उसके शरीर को सीधा कर

दिया ।

सा तदर्जुसमानाङ्गी बृहच्छ्रोणिपयोधरा ।  
मुकुन्दस्पर्शनात्सद्यो बभूव प्रमदोत्तमा ॥ ८ ॥

**शब्दार्थ**

सा—वह; तदा—तब; ऋजु—सीधी; समान—समतल; अङ्गी—अंग वाली; बृहत्—विशाल; श्रोणि—कूल्हे ( नितम्ब ); पयः-धरा—तथा स्तन वाली; मुकुन्द-स्पर्शनात्—मुकुन्द के स्पर्श से; सद्यः—सहसा; बभूव—हो गई; प्रमदा—स्त्री; उत्तमा—अत्यन्त सधी हुई ।

भगवान् मुकुन्द के स्पर्श मात्र से त्रिवक्रा सहसा एक अतीव सुन्दर स्त्री में बदल गई जिसके अंग सधे हुए तथा सम-अनुपात वाले थे और नितम्ब तथा स्तन बड़े-बड़े थे ।

ततो रूपगुणौदार्यसम्पन्ना प्राह केशवम् ।  
उत्तरीयान्तमकृष्य स्मयन्ती जातहृच्छया ॥ ९ ॥

**शब्दार्थ**

ततः—तत्पश्चात्; रूप—सौन्दर्य; गुण—उत्तम आचरण; औदार्य—तथा उदारता से; सम्पन्ना—युक्त; प्राह—बोली; केशवम्—कृष्ण से; उत्तरीय—अंगौछे का; अन्तम्—छोर; आकृष्य—खींचकर; स्मयन्ती—हँसती हुई; जात—उत्पन्न करके; हृत्-शया—काम-भावनाएँ ।

अब सौन्दर्य, आचरण तथा उदारता से युक्त त्रिवक्रा को भगवान् केशव के प्रति कामेच्छाओं का अनुभव होने लगा । वह उनके अंगवस्त्र के छोर को पकड़कर हँसने लगी और उनसे इस प्रकार बोली ।

एहि वीर गृहं यामो न त्वां त्यक्तुमिहोत्सहे ।  
त्वयोन्मथितचित्तायाः प्रसीद पुरुषर्षभ ॥ १० ॥

**शब्दार्थ**

एहि—आओ; वीर—हे वीर; गृहम्—मेरे घर; यामः—चलें; न—नहीं; त्वाम्—तुमको; त्यक्तुम्—छोड़ना; इह—यहाँ; उत्सहे—सह सकती हूँ; त्वया—आपके द्वारा; उन्मथित—उत्तेजित, मथा गया; चित्तायाः—चित्त वाली पर; प्रसीद—कृपा करें; पुरुष-ऋषभ—हे पुरुष-श्रेष्ठ ।

[त्रिवक्रा ने कहा] : हे वीर, आओ, मेरे घर चलो । मैं आपको यहाँ छोड़कर जा नहीं सकती । हे नर-श्रेष्ठ, मुझ पर तरस खाओ क्योंकि आपने मेरे चित्त को उद्वेलित कर डाला है ।

तात्पर्य : श्रील विश्वनाथ चक्रवर्ती निम्नलिखित बातचीत प्रस्तुत करते हैं—

कृष्ण : क्या तुम मुझे अपने घर भोजन करने के लिए बुला रही हो ?

त्रिवक्रा : बस, मैं आपको यहाँ छोड़ नहीं सकती ।

कृष्ण : किन्तु यहाँ राजमार्ग पर चलने वाले लोग तुम्हारे कहने का कुछ और अर्थ लगाकर हँसेंगे।

अतः तुम तो ऐसा मत कहो।

त्रिवक्रा : मन उद्वेलित होने से मुझसे रहा नहीं जा रहा है। आपने मेरा स्पर्श करने की भूल जो कर दी। यह मेरा दोष नहीं है।

एवं स्त्रिया याच्यमानः कृष्णो रामस्य पश्यतः ।

मुखं वीक्ष्यानु गोपानां प्रहसंस्तामुवाच ह ॥ ११ ॥

#### शब्दार्थ

एवम्—इस प्रकार; स्त्रिया—स्त्री द्वारा; याच्य नानः—अनुनय-विनय किये जाने पर; कृष्णः—कृष्ण ने; रामस्य—बलराम के; पश्यतः—देखते हुए; मुखम्—मुख को; वीक्ष्य—देखकर; अनु—तब; गोपानाम्—ग्वालबालों का; प्रहसन्—हँसते हुए; ताम्—उससे; उवाच ह—कहा।

स्त्री द्वारा इस प्रकार अनुनय-विनय किये जाने पर भगवान् कृष्ण ने सर्वप्रथम बलराम के मुख की ओर देखा, जो इस घटना को देख रहे थे और तब ग्वालमित्रों के मुखों पर दृष्टि डाली। तब हँसते हुए कृष्ण ने उसे इस प्रकार उत्तर दिया।

एष्यामि ते गृहं सुभु पुंसामाधिविकर्शनम् ।

साधितार्थोऽगृहाणां नः पान्थानां त्वं परायणम् ॥ १२ ॥

#### शब्दार्थ

एष्यामि—जाऊँगा; ते—तुम्हारे; गृहम्—घर; सु-भु—हे सुन्दर भौंहों वाली; पुंसाम्—मनुष्यों की; आधि—मानसिक व्यथा; विकर्शनम्—नष्ट करने वाली; साधित—पूरा करके; अर्थः—अपना कार्य; अगृहाणाम्—बिना घर वाले, बेघर; नः—हमारे लिए; पान्थानाम्—पथिकों के लिए; त्वम्—तुम; पर—सर्वश्रेष्ठ; अयनम्—आश्रय।

[ भगवान् कृष्ण ने कहा ] : हे सुन्दर भौंहों वाली स्त्री, अपना कार्य पूरा करते ही मैं अवश्य तुम्हारे घर आऊँगा जहाँ लोगों को चिन्ता से मुक्ति मिल सकती है। निस्सन्देह तुम हम जैसे बेघर पथिकों के लिए सर्वोत्तम आश्रय हो।

तात्पर्य : अगृहाणाम् शब्द से श्रीकृष्ण न केवल यह इंगित करते हैं कि उनका कोई स्थायी निवास नहीं है अपितु यह भी कि वे अभी विवाहित नहीं हैं।

विसृज्य माध्व्या वाण्या ताम्रजन्मार्गे वणिक्पथैः ।

नानोपायनताम्बूलस्त्रगन्धैः साग्रजोऽर्चितः ॥ १३ ॥

#### शब्दार्थ

विसृज्य—छोड़कर; माध्व्या—मधुर; वाण्या—वाणी से; ताम्—उसको; व्रजन्—चलते हुए; मार्गे—मार्ग पर; वणिक्-पथैः—व्यापारियों द्वारा; नाना—विविध; उपायन—सादर भेंटें; ताम्बूल—पान; स्रक्—मालाएँ; गन्धैः—तथा सुगन्धित द्रव्यों से; स—सहित; अग्र-जः—अपने बड़े भाई; अर्चितः—पूजा किया गया।

इस प्रकार मीठी बातें करके उससे विदा लेकर भगवान् कृष्ण मार्ग पर आगे बढ़े। रास्ते-भर व्यापारियों ने पान, मालाएँ तथा सुगन्धित द्रव्य से युक्त नाना प्रकार की सादर भेंटें अर्पित करके उनकी तथा उनके बड़े भाई की पूजा की।

तद्दर्शनस्मरक्षोभादात्मानं नाविदन्स्त्रियः ।

विस्त्रस्तवासःकवर वलया लेख्यमूर्तयः ॥ १४ ॥

### शब्दार्थ

तत्—उसको; दर्शन—देखने से; स्मर—कामदेव के प्रभाव से; क्षोभात्—उद्वेलित होने से; आत्मानम्—स्वयं को; न अविदन्—नहीं पहचान पाई; स्त्रियः—स्त्रियाँ; विस्त्रस्त—ढीले हुए; वासः—वस्त्र; कवर—चोटियाँ; वलयाः—तथा उनकी चूड़ियाँ; लेख्य—मानो चित्रित; मूर्तयः—आकृतियाँ।

कृष्ण के दर्शन से नगर की नारियों के हृदय में कामदेव जाग उठा। इस प्रकार क्षुब्ध होकर वे अपनी सुध-बुध खो दीं। उनके परिधान, लट तथा उनके कंगन ढीले पड़ जाते और वे चित्र में बनी आकृति सी स्तब्ध खड़ी रह जातीं।

तात्पर्य : श्रील विश्वनाथ चक्रवर्ती कहते हैं कि चूँकि कृष्ण को देखते ही मथुरा की स्त्रियों में माधुर्य आकर्षण के लक्षण प्रकट हो आये थे क्योंकि वे नगर में सर्वोच्च भक्त थीं। कामदेव के दस लक्षण इस प्रकार बताए गये हैं—*चक्षुरागः प्रथमं चित्तासंगस्ततोऽथ संकल्पः निद्राच्छेदस्तनुता विषयनिवृत्तिस्त्रपानाशः/ उन्मादो मूर्च्छा मृतिरित्येताः स्मरदशा दशैव स्युः*—सर्वप्रथम आँखों के माध्यम से व्यक्त आकर्षण, तब मन में गहन आसक्ति, तब संकल्प, निद्रा का हास, दुर्बल होना, बाह्य वस्तुओं में अरुचि, निर्लज्जता, उन्माद, मूर्च्छा तथा मृत्यु—ये कामदेव के प्रभाव की दस दशाएँ हैं।

श्रील विश्वनाथ चक्रवर्ती ठाकुर यह भी इंगित करते हैं कि जिन भक्तों में शुद्ध भगवत्प्रेम होता है उनमें सामान्यतया मृत्यु लक्षण प्रकट नहीं होता क्योंकि कृष्ण के सम्बन्ध में यह अशुभ है। किन्तु उनमें अन्य नव-लक्षण प्रकट होते हैं जिनकी परिणति परम आनन्दमय मूर्च्छा में होती है।

ततः पौरान्मृच्छमानो धनुषः स्थानमच्युतः ।

तस्मिन्प्रविष्टो ददृशे धनुरैन्द्रमिवाद्भुतम् ॥ १५ ॥

### शब्दार्थ



ततः—तब; पौरान्—नगरवासियों से; पृच्छमानः—पूछते-पाछते; धनुषः—धनुष के; स्थानम्—स्थान को; अच्युतः—अच्युत भगवान् ने; तस्मिन्—वहाँ; प्रविष्टः—घुसते हुए; ददृशे—देखा; धनुः—धनुष; ऐन्द्रम्—इन्द्र का; इव—सदृश; अद्भुतम्—विस्मयकारी।

तत्पश्चात् कृष्ण ने स्थानीय लोगों से वह स्थान पूछा जहाँ धनुष-यज्ञ होना था। जब वे वहाँ गये तो उन्होंने विस्मयकारी धनुष देखा जो इन्द्र के धनुष जैसा था।

पुरुषैर्बहुभिर्गुप्तमर्चितं परमर्द्धिमत् ।

वार्यमाणो नृभिः कृष्णः प्रसह्य धनुराददे ॥ १६ ॥

#### शब्दार्थ

पुरुषैः—लोगों द्वारा; बहुभिः—अनेक; गुप्तम्—रक्षित; अर्चितम्—पूजित; परम—परम; ऋद्धि—ऐश्वर्य से; मत्—युक्त; वार्यमाणः—मना किये गये; नृभिः—रक्षकों द्वारा; कृष्णः—कृष्ण ने; प्रसह्य—बलपूर्वक; धनुः—धनुष को; आददे—उठा लिया।

उस अत्यन्त ऐश्वर्ययुक्त धनुष की लोगों की विशाल टोली द्वारा निगरानी की जा रही थी और वे लोग उसकी आदर भाव से पूजा कर रहे थे। तो भी कृष्ण आगे बढ़ते गये और रक्षकों के मना करने के बावजूद उन्होंने उस धनुष को उठा लिया।

करेण वामेन सलीलमुद्धृतं

सज्यं च कृत्वा निमिषेण पश्यताम् ।

नृणां विकृष्य प्रबभञ्ज मध्यतो

यथेक्षुदण्डं मदकर्युरुक्रमः ॥ १७ ॥

#### शब्दार्थ

करेण—हाथ से; वामेन—बाएँ; स-लीलम्—खेल खेल में; उद्धृतम्—उठाया; सज्यम्—डोरी चढ़ाकर; च—तथा; कृत्वा—करके; निमिषेण—पलक मारते; पश्यताम्—देखते देखते; नृणाम्—रक्षकों के; विकृष्य—खींचकर; प्रबभञ्ज—तोड़ डाला; मध्यतः—बीच से; यथा—जिस तरह; इक्षु—ईख के; दण्डम्—तने को; मद-करी—मतवाला हाथी; उरुक्रमः—कृष्ण ने।

अपने बाएँ हाथ से उस धनुष को आसानी से उठाकर भगवान् उरुक्रम ने राजा के रक्षकों के देखते देखते एक क्षण से भी कम समय में डोरी चढ़ा दी। तत्पश्चात् उन्होंने बलपूर्वक डोरी खींची और उस धनुष को बीच से तोड़ डाला जिस तरह मतवाला हाथी गन्ने को तोड़ दे।

धनुषो भज्यमानस्य शब्दः खं रोदसी दिशः ।

पूरयामास यं श्रुत्वा कंसस्त्रासमुपागमत् ॥ १८ ॥

#### शब्दार्थ

धनुषः—धनुष के; भज्यमानस्य—टूटने से; शब्दः—ध्वनि; खम्—पृथ्वी; रोदसी—आकाश; दिशः—तथा सारी दिशाएँ; पूरयामास—भर गई; यम्—जिसे; श्रुत्वा—सुनकर; कंसः—राजा कंस ने; त्रासम्—भय; उपागमत्—अनुभव किया।

धनुष के टूटने की ध्वनि पृथ्वी तथा आकाश की सारी दिशाओं में भर गई। इसे सुनकर कंस भयभीत हो उठा।

तद्रक्षणः सानुचरं कुपिता आततायिनः ।  
गृहीतुकामा आववृगृह्यतां वध्यतामिति ॥ १९ ॥

**शब्दार्थ**

तत्—उसके; रक्षणः—रक्षक; स—सहित; अनुचरम्—अपने संगी जनों; कुपिताः—क्रुद्ध; आततायिनः—हथियार लिए; गृहीतु—पकड़ने के लिए; कामाः—चाहते हुए; आववृः—घेर लिया; गृह्यताम्—पकड़ लो; वध्यताम्—मार डालो; इति—ऐसा कहते हुए।

तब क्रुद्ध रक्षकों ने अपने अपने हथियार उठा लिये और कृष्ण तथा उनके संगियों को पकड़ने की इच्छा से उन्हें घेर लिया और “पकड़ लो, मार डालो” कहकर चिल्लाने लगे।

अथ तान्दुरभिप्रायान्विलोक्य बलकेशवौ ।  
क्रुद्धौ धन्वन आदाय शकले तांश्च जघ्नतुः ॥ २० ॥

**शब्दार्थ**

अथ—तत्पश्चात्; तान्—उनको; दुरभिप्रायान्—दुष्ट अभिप्राय वाले; विलोक्य—देखकर; बल-केशवौ—बलराम तथा कृष्ण ने; क्रुद्धौ—क्रुद्ध; धन्वनः—धनुष के; आदाय—लेकर; शकले—दोनों टूटे खंड; तान्—उनको; च—तथा; जघ्नतुः—प्रहार किया।

दुर्भावना से रक्षकों को अपनी ओर आते देखकर बलराम तथा कृष्ण ने धनुष के दोनों खण्डों को अपने हाथों में ले लिया और वे उन सबों को इन्हीं से मारने लगे।

बलं च कंसप्रहितं हत्वा शालामुखात्ततः ।  
निष्क्रम्य चेरतुर्हृष्टौ निरीक्ष्य पुरसम्पदः ॥ २१ ॥

**शब्दार्थ**

बलम्—सेना; च—तथा; कंस-प्रहितम्—कंस द्वारा भेजी; हत्वा—मारकर; शाला—यज्ञस्थल के; मुखात्—द्वार से; ततः—तब; निष्क्रम्य—निकलकर; चेरतुः—दोनों विचरण करने लगे; हृष्टौ—प्रसन्न; निरीक्ष्य—देखकर; पुर—नगर की; सम्पदः—सम्पदा।

कंस द्वारा भेजी गई सैन्य-टुकड़ी को भी मारकर कृष्ण तथा बलराम यज्ञशाला के मुख्य द्वार से निकल आये और सुखपूर्वक ऐश्वर्यमय दृश्य देखते हुए नगर में घूमते रहे।

तयोस्तदद्भुतं वीर्यं निशाम्य पुरवासिनः ।  
तेजः प्रागल्भ्यं रूपं च मेनिरे विबुधोत्तमौ ॥ २२ ॥

शब्दार्थ

तयोः—उन दोनों के; तत्—उस; अद्भुतम्—अद्भुत; वीर्यम्—वीरतापूर्ण कार्य को; निशाम्य—देखकर; पुर-वासिनः—नगर निवासी; तेजः—उनके तेज; प्रागल्भ्यम्—प्रगल्भता, साहस; रूपम्—सौन्दर्य को; च—तथा; मेनिरे—उन्होंने सोचा; विबुध—देवता; उत्तमौ—दो श्रेष्ठ।

कृष्ण तथा बलराम द्वारा किये गये अद्भुत कार्य तथा उनके बल, साहस एवं सौन्दर्य को देखकर नगरवासियों ने सोचा कि वे अवश्य ही दो मुख्य देवता हैं।

तयोर्विचरतोः स्वैरमादित्योऽस्तमुपेयिवान् ।

कृष्णरामौ वृतौ गोपैः पुराच्छकटमीयतुः ॥ २३ ॥

शब्दार्थ

तयोः—उन दोनों के; विचरतोः—विचरण करते; स्वैरम्—इच्छानुसार; आदित्यः—सूर्य; अस्तम्—डूबने के; उपेयिवान्—निकट हो आया; कृष्ण-रामौ—कृष्ण तथा बलराम; वृतौ—घिरे; गोपैः—ग्वालों से; पुरात्—नगरसे; शकटम्—जहाँ पर बैलगाड़ियाँ खड़ी थीं; ईयतुः—गये।

जब वे इच्छानुसार विचरण कर रहे थे तब सूर्य अस्त होने लगा था अतः वे ग्वालबालों के साथ नगर को छोड़कर ग्वालों के बैलगाड़ी वाले खेमे में लौट आये।

गोप्यो मुकुन्दविगमे विरहातुरा या

आशासताशिष ऋता मधुपुर्यभूवन् ।

सम्पश्यतां पुरुषभूषणगात्रलक्ष्मीं

हित्वेतरान् भजतश्चकमेऽयनं श्रीः ॥ २४ ॥

शब्दार्थ

गोप्यः—गोपियाँ; मुकुन्द-विगमे—मुकुन्द के विदा होते समय; विरह—वियोग की भावना से; आतुराः—शोकाकुल; याः—जो; आशासत—बोली थीं; आशिषः—वर, आशीर्वाद; ऋताः—सच; मधु-पुरि—मथुरा में; अभूवन्—हो गये; सम्पश्यताम्—देखने वालों के लिए; पुरुष—मनुष्यों के; भूषण—आभूषण के; गात्र—शरीर के; लक्ष्मीम्—सौन्दर्य; हित्वा—त्यागकर; इतरान्—अन्य लोग; नु—निस्सन्देह; भजतः—उनकी पूजा करने वाले; चकमे—लालसा करने लगे; अयनम्—शरण के लिए; श्रीः—लक्ष्मी।

वृन्दावन से मुकुन्द (कृष्ण) के विदा होते समय गोपियों ने भविष्यवाणी की थी कि मथुरावासी अनेक वरों का भोग करेंगे और अब उन गोपियों की भविष्यवाणी सत्य उतर रही थी क्योंकि मथुरा के वासी पुरुष-रत्न कृष्ण के सौन्दर्य को एकटक देख रहे थे। निस्सन्देह लक्ष्मीजी उस सौन्दर्य का आश्रय इतना चाहती थीं कि उन्होंने अनेक अन्य लोगों का परित्याग कर दिया, यद्यपि वे उनकी पूजा करते थे।

अवनिक्ताङ्घ्रियुगलौ भुक्त्वा क्षीरोपसेचनम् ।

ऊषतुस्तां सुखं रात्रिं ज्ञात्वा कंसचिकीर्षितम् ॥ २५ ॥

शब्दार्थ

अवनिक्त—धुलाकर; अङ्घ्रि-युगलौ—दोनों के पाँव; भुक्त्वा—खाने के बाद; क्षीर-उपसेचनम्—खीर; ऊषतुः—वहाँ टिके रहे; ताम्—उस; सुखम्—सुखपूर्वक; रात्रिम्—रात; ज्ञात्वा—जानकर; कंस-चिकीर्षितम्—कंस के लिए जो चाह रहा था।

कृष्ण तथा बलराम के पाँव धोये जाने के बाद दोनों भाइयों ने खीर खाई। तत्पश्चात् यह जानते हुए ही कि कंस क्या करना चाहता है, उन दोनों ने वहाँ सुखपूर्वक रात बिताई।

कंसस्तु धनुषो भङ्गं रक्षिणां स्वबलस्य च ।

वधं निशम्य गोविन्दरामविक्रीडितं परम् ॥ २६ ॥

दीर्घप्रजागरो भीतो दुर्निमित्तानि दुर्मतिः ।

बहून्यचष्टोभयथा मृत्योर्दौत्यकराणि च ॥ २७ ॥

शब्दार्थ

कंसः—कंस; तु—लेकिन; धनुषः—धनुष का; भङ्गम्—टूटना; रक्षिणाम्—रक्षकों का; स्व—अपने; बलस्य—सेना का; च—तथा; वधम्—मारा जाना; निशम्य—सुनकर; गोविन्द-राम—कृष्ण तथा राम का; विक्रीडितम्—खेलना; परम्—मात्र; दीर्घ—दीर्घकाल तक; प्रजागरः—जगा रहा; भीतः—डरा हुआ; दुर्निमित्तानि—अपशकुन; दुर्मतिः—दुष्टबुद्धि; बहूनि—अनेक; अचष्ट—देखा; उभयथा—दोनों ही दशाओं (जगते-सोते) में; मृत्योः—मृत्यु के; दौत्य-कराणि—दूतों को; च—तथा।

दूसरी ओर दुर्भति राजा कंस ने जब यह सुना कि किस तरह खेल की भान्ति कृष्ण तथा बलराम ने धनुष तोड़ डाला है और उसके रक्षकों तथा सैनिकों को मार डाला है, तो वह अत्यधिक भयभीत हो उठा। वह काफी समय तक जागता रहा और जागते तथा सोते हुए उसने मृत्यु के दूतों वाले कई अपशकुन देखे।

अदर्शनं स्वशिरसः प्रतिरूपे च सत्यपि ।

असत्यपि द्वितीये च द्वैरूप्यं ज्योतिषां तथा ॥ २८ ॥

छिद्रप्रतीतिश्छायायां प्राणघोषानुपश्रुतिः ।

स्वर्णप्रतीतिर्वृक्षेषु स्वपदानामदर्शनम् ॥ २९ ॥

स्वप्ने प्रेतपरिष्वङ्गः खरयानं विषादनम् ।

यायान्नलदमाल्येकस्तैलाभ्यक्तो दिगम्बरः ॥ ३० ॥

अन्यानि चेत्यंभूतानि स्वप्नजागरितानि च ।

पश्यन्मरणसन्त्रस्तो निद्रां लेभे न चिन्तया ॥ ३१ ॥

शब्दार्थ

अदर्शनम्—न दिखाई पड़ना; स्व—अपना; शिरसः—सिर; प्रतिरूपे—परछाई में; च—तथा; सति—उपस्थित रहकर; अपि—भी; असति—नहीं होना; अपि—भी; द्वितीये—दो-दो का कारण; च—तथा; द्वै-रूप्यम्—दो प्रतिबिम्ब; ज्योतिषाम्—नक्षत्रों के; तथा—भी; छिद्र—छेद का; प्रतीतिः—दिखना; छायायाम्—अपनी छाया में; प्राण—अपनी प्राण-वायु की; घोष—अनुगूँज; अनुपश्रुतिः—न सुनाई पड़ना; स्वर्ण—सुनहले रंग की; प्रतीतिः—अनुभूति; वृक्षेषु—वृक्षों में; स्व—अपना; पदानाम्—पदचिह्न; अदर्शनम्—न दिखना; स्वप्ने—सोते हुए; प्रेत—भूत-प्रेतों से; परिष्वङ्गः—आलिंगित; खर—गधे पर;

यानम्—सवारी करते; विष—जहर; अदनम्—भक्षण करते; यायात्—जा रहा था; नलद—एक फूल, अडहुल; माली—माला पहने; एकः—कोई; तैल—तेल से; अभ्यक्तः—चपोड़े; दिक्—अम्बरः—नग्न; अन्यानि—अन्य ( शकुन ); च—तथा; इत्थम्—भूतानि—इस तरह के; स्वप्न—सोते समय; जागरितानि—जगते हुए; च—भी; पश्यन्—देखते हुए; मरण—मृत्यु से; सन्त्रस्तः—भयभीत; निद्राम्—नींद; लेभे—प्राप्त कर सका; न—नहीं; चिन्तया—चिन्ता के कारण ।

जब उसने अपनी परछाईं देखी तो उसमें उसे अपना सिर नहीं दिखा, अकारण ही चन्द्रमा तथा तारे दो-दो लगने लगे; उसे अपनी छाया में छेद दिखा, उसे अपनी प्राण-वायु की ध्वनि सुनाई नहीं पड़ी, वृक्ष सुनहली आभा से प्रच्छन्न लगने लगे और वह अपने पदचिन्हों को न देख सका। उसने स्वप्न में देखा कि भूत-प्रेत उसका आलिंगन कर रहे हैं, वह गधे पर सवार है और विष पी रहा है। यही नहीं, नलद ( अडहुल ) फूलों की माला पहने और तेल पोते एक नंगा व्यक्ति उधर से जा रहा है। इन तथा अन्य ऐसे अपशकुनों को स्वप्न में तथा जागते हुए देखकर कंस अपनी मृत्यु की सम्भावना से भयभीत था और चिन्ता के कारण वह सो न सका ।

व्युष्टायां निशि कौरव्य सूर्ये चाद्ध्यः समुत्थिते ।

कारयामास वै कंसो मल्लक्रीडामहोत्सवम् ॥ ३२ ॥

#### शब्दार्थ

व्युष्टायाम्—बीत जाने पर; निशि—रात; कौरव्य—हे कुरुवंशी ( परीक्षित ); सूर्ये—सूर्य; च—तथा; अद्ध्यः—जल से; समुत्थिते—उदय होने पर; कारयाम् आस—पूरा कराया; वै—निस्सन्देह; कंसः—कंस; मल्ल—पहलवानों के; क्रीडा—खेल का; महा-उत्सवम्—बहुत विशाल उत्सव ।

जब अन्ततः रात बीत गई और सूर्य पुनः जल में से ऊपर निकला तो कंस विशाल कुश्ती-उत्सव ( दंगल ) का आयोजन करने लगा ।

आनर्चुः पुरुषा रङ्गं तूर्यभेर्यश्च जघ्निरे ।

मञ्चाश्चालङ्कृताः स्त्रिभिः पताकाचैलतोरणैः ॥ ३३ ॥

#### शब्दार्थ

आनर्चुः—पूजा की; पुरुषाः—राजा के लोगों ने; रङ्गम्—रंगभूमि या शाला की; तूर्य—तुरही; भेर्यः—ढोल; च—तथा; जघ्निरे—बजने लगे; मञ्चाः—देखने के मंचान, चबूतरे; च—तथा; अलङ्कृताः—सजाये गये थे; स्त्रिभिः—मालाओं से; पताका—झंडियों से; चैल—वस्त्र के फीतों से; तोरणैः—द्वारों से, बन्दनवारों से ।

राजा के लोगों ने मल्लस्थल ( दंगल ) की विधिवत् पूजा की, अपने ढोल तथा अन्य वाद्य बजाये और दर्शकदीर्घाओं को मालाओं, झंडियों, फीतों तथा बन्दनवारों से खूब सजाया गया ।

तेषु पौरा जानपदा ब्रह्मक्षत्रपुरोगमाः ।

यथोपजोषं विविशू राजानश्च कृतासनाः ॥ ३४ ॥

**शब्दार्थ**

तेषु—इन ( मंचों ) पर; पौराः—नगरनिवासी; जानपदाः—आसपास से आये लोग; ब्रह्म—ब्राह्मणों; क्षत्र—क्षत्रियों के साथ; पुरः-गमाः—इत्यादि; यथा-उपजोषम्—सुविधानुसार; विविशुः—आकर बैठ गये; राजानः—राजागण; च—भी; कृत—दिये गये; असनाः—विशेष बैठने के स्थान।

नगरनिवासी तथा पड़ोसी जिलों के निवासी ब्राह्मण तथा क्षत्रियों इत्यादि के साथ आये और दीर्घाओं में सुखपूर्वक बैठ गये। राजसी अतिथियों को विशिष्ट स्थान दिये गये।

कंसः परिवृतोऽमात्यै राजमञ्च उपाविशत् ।

मण्डलेश्वरमध्यस्थो हृदयेन विदूयता ॥ ३५ ॥

**शब्दार्थ**

कंसः—कंस; परिवृतः—घिरा हुआ; अमात्यैः—अपने मंत्रियों से; राज-मञ्चे—राजसी मंच पर; उपाविशति—बैठा; मण्डल-ईश्वर—विभिन्न मण्डलों के गौण शासक; मध्य—बीच में; स्थः—स्थित; हृदयेन—हृदय से; विदूयता—थरथराता, काँपता।

अपने मंत्रियों से घिरा हुआ कंस अपने राजमंच पर आसीन हुआ। किन्तु अपने विविध मण्डलेश्वरों के बीच में बैठे हुए भी उसका हृदय काँप रहा था।

वाद्यमानेषु तूर्येषु मल्लतालोत्तरेषु च ।

मल्लाः स्वलङ्कृताः दृप्ताः सोपाध्यायाः समासत ॥ ३६ ॥

**शब्दार्थ**

वाद्यमानेषु—बजाये जाने पर; तूर्येषु—तुरही पर; मल्ल—कुशती के उपयुक्त; ताल—ताल, थाप; उत्तरेषु—प्रमुख; च—तथा; मल्लाः—पहलवान; सु-अलङ्कृताः—सुसज्जित; दृप्ताः—गर्वित; स-उपाध्यायाः—अपने अपने प्रशिक्षकों सहित; समासत—आकर बैठ गये।

जब कुशती के उपयुक्त ताल पर वाद्य यंत्र जोर जोर से बजने लगे तो खूब सजे गर्वीले पहलवान अपने अपने प्रशिक्षकों समेत अखाड़े में प्रविष्ट हुए और बैठ गये।

चाणूरो मुष्टिकः कूतः शलस्तोशल एव च ।

त आसेदुरुपस्थानं वल्गुवाद्यप्रहर्षिताः ॥ ३७ ॥

**शब्दार्थ**

चाणूरः मुष्टिकः कूटः—चाणूर, मुष्टिक तथा कूट नामक पहलवान; शलः तोशलः—शल तथा तोशल; एव च—भी; ते—वे; आसेदुः—बैठ गये; उपस्थानम्—अखाड़े की चटाई पर; वल्गु—मोहक; वाद्य—संगीत से; प्रहर्षिताः—हर्षित, उत्साहित।

आनंददायक संगीत से उल्लासित होकर चाणूर, मुष्टिक, कूट, शल तथा तोशल अखाड़े की चटाई पर बैठ गये।

नन्दगोपादयो गोपा भोजराजसमाहुताः ।  
निवेदितोपायनास्त एकस्मिन्मञ्च आविशन् ॥ ३८ ॥

### शब्दार्थ

नन्द-गोप-आदयः—नन्द गोप इत्यादि; गोपाः—ग्वाले; भोज-राज—कंस द्वारा; समाहुताः—आगे बुलाये जाने पर; निवेदित—प्रस्तुत करते हुए; उपायनाः—अपनी भेंटें; ते—वे; एकस्मिन्—एक; मञ्चे—दर्शक दीर्घा में; आविशन्—बैठ गये।

भोजराज ( कंस ) द्वारा बुलाये जाने पर नन्द महाराज तथा अन्य ग्वालों ने उसे अपनी अपनी भेंटें पेश कीं और तब वे एक दीर्घा में जाकर बैठ गये।

तात्पर्य : श्रील विश्वनाथ चक्रवर्ती के अनुसार *समाहुताः* शब्द सूचित करता है कि कंस ने व्रज के प्रधान व्यक्तियों को आदर समेत आगे बुलाया जिससे केन्द्रीय सरकार को अपनी भेंटें अर्पित कर सकें। आचार्य के अनुसार कंस ने नन्द को यह कहकर आश्वस्त किया, “हे व्रजराज! आप मेरे ग्राम-शासकों में सर्वोपरि हैं। आप अपने गोप-ग्राम से मथुरा तो आये हैं किन्तु आप मुझसे भेंट करने नहीं आये। क्या इसलिए कि आप डरे हुए हैं? आप यह न सोचें कि आपके दोनों पुत्रों ने धनुष तोड़ डाला है इसलिए वे बुरे हैं। मैंने उन्हें इसलिए यहाँ आमंत्रित किया था क्योंकि मैंने सुन रखा था कि वे अतीव बलशाली हैं। मैंने यह मल्ल-प्रतियोगिता उनके शक्ति-परीक्षण के लिए ही आयोजित की है। अतः आप बिना किसी संकोच के आगे आये। डरें नहीं।”

श्रील विश्वनाथ चक्रवर्ती आगे बतलाते हैं कि नन्द महाराज ने देखा कि उनके दोनों पुत्र वहाँ उपस्थित नहीं हैं। स्पष्ट था कि राजा कंस के आदेश की अवहेलना करके उन्होंने प्रातःकाल के समय को अवकाश के रूप में ले लिया था और वे कहीं चले गये थे। अतः कंस ने कुछ ग्वालों को उनकी खोज करने के लिए तथा उन्हें ढंग से व्यवहार करने और अखाड़े में वापस आने की सलाह देने के लिए नियुक्त कर दिया था। श्रील विश्वनाथ आचार्य यह भी कहते हैं कि दीर्घाओं में नन्द तथा ग्वालों के बैठने का दूसरा कारण यह भी था कि राजमंच पर बैठने के लिए उन्हें स्थान नहीं मिल सका।

इस प्रकार श्रीमद्भागवत के दसवें स्कन्ध के अन्तर्गत “यज्ञ के धनुष का टूटना” नामक बयालिसवें अध्याय के श्री श्रीमद् ए.सी. भक्तिवेदान्त स्वामी प्रभुपाद के विनीत सेवकों द्वारा रचित तात्पर्य पूर्ण हुए।